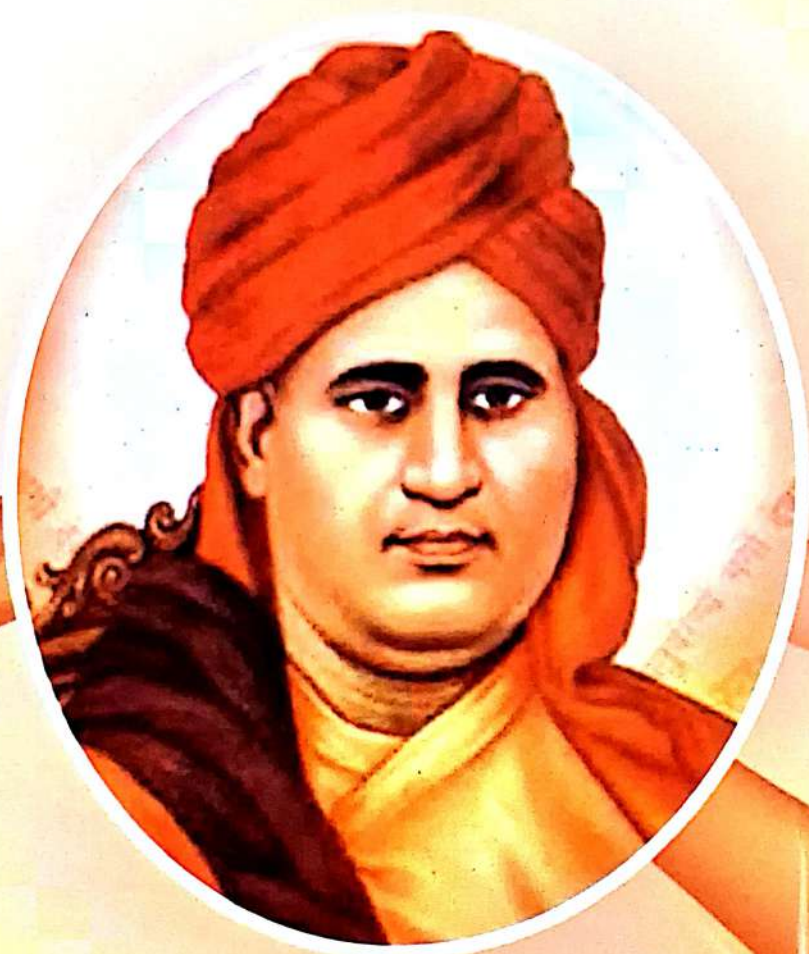


दयानन्द-दर्शन के विविध आयाम



डॉ० अरविन्द कुमार

प्रकाशक : आर्यावर्त जन उत्थान न्यास (पंजी.), अमरोहा

अनुक्रमणिका

क्रम	रचना	पृष्ठ
♦	शुभकामना सन्देश— प्रो० सच्चिदानन्द मिश्र —	13
♦	शुभाशंसा— आचार्या डॉ० सुमेधा —	14
♦	शुभकामना सन्देश— प्रो० वीर वीरेंद्र सिंह —	15
♦	एक जंगल में नई बरती बसा दी तूने / प्रो. सारस्वत मोहन 'मनीषी'—	18
1.	स्वामी दयानन्द का त्रैतवाद और वैदिक दर्शन / प्रो. राजेश्वर प्रसाद मिश्र—	19
2.	महान दार्शनिक— महर्षि दयानन्द सरस्वती / प्रो. (डॉ.) विनय विद्यालंकार—	31
3.	आध्यात्मिक संवेतना केन्द्रित समग्र क्रान्ति के अग्रनायक महर्षि दयानन्द सरस्वती / प्रो. अशोक कुमार रुस्तगी, प्रो. बीना रुस्तगी—	39
4.	महर्षि दयानन्द का वेदाभिमत दार्शनिक पक्ष (त्रैतवाद के सन्दर्भ में) / डॉ. सत्यकेतु—	54
5.	महर्षि दयानन्द का दार्शनिक चिन्तन / डॉ. करुणा आर्या—	62
6.	स्वामी दयानन्द सरस्वती का स्त्री-शिक्षा दर्शन / डॉ. ओमकार—	74
7.	राष्ट्रवाद के प्रकाश स्तम्भ महर्षि दयानन्द सरस्वती / डॉ. नीलम—	80
8.	महर्षि दयानन्द : एक कुशल समाज सुधारक / डॉ. ठण्डीलाल मीणा—	85
9.	महर्षि दयानन्द का स्वराष्ट्र दर्शन / डॉ. शिवानी गोयल, डॉ. पीयूष कुमार—	89
10.	दयानन्द सरस्वती का समाज दर्शन / डॉ. अनुराग कुमार पाण्डेय—	97
11.	महर्षि दयानन्द कृत वेदभाष्यों में जीवात्मा, कर्मफल व्यवस्था एवं पुनर्जन्म की अवधारणा— एक दार्शनिक विश्लेषण / डॉ. रिकू कुमार—	103
12.	हिन्दी साहित्य के 'स्त्री विमर्श' पर दयानन्द सरस्वती का प्रभाव / राजीव कुमार—	110
13.	महर्षि दयानन्द का समाज दर्शन / डॉ. पूनम वर्मा, डॉ. प्रियंका शर्मा—	119
14.	महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के शिक्षा दर्शन की वर्तमान शिक्षा में उपादेयता / अनुराग मिश्र—	127
15.	स्वामी दयानन्द के शिक्षा दर्शन की वर्तमान में उपादेयता (स्त्री शिक्षा के सन्दर्भ में) / राजकुमार वैदिक—	138
16.	महर्षि दयानन्द का स्वराष्ट्र दर्शन / राजेश कुमार—	145

राष्ट्रवाद के प्रकाश स्तंभ महर्षि दयानन्द सरस्वती

—डॉ० नीलम

असिस्टेन्ट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग
बी.डी.एम.यू. गर्ल्स डिग्री कॉलेज, शिकोहाबाद

महापुरुषों की कीर्ति किसी एक युग तक सीमित नहीं रहती, उनका लोकहितकारी चिंतन त्रैकालिक, सार्वभौमिक एवं सार्वदेशिक होता है तथा युगों-युगों तक समाज का पथ-प्रदर्शन करता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती हमारे समाज एवं राष्ट्र के ऐसे ही एक प्रकाश स्तंभ हैं, जो राष्ट्रक्रांति के प्रेरक बने। जिस युग में उन्होंने जन्म लिया उस समय देशी-विदेशी प्रभाव से भारतीय संस्कृति संक्रमण के दौर से गुजर रही थी और उसका पतन प्रारंभ हो गया था। उन्होंने भयाक्रांत आडम्बरों में जकड़ी और धर्म से विमुख जनता को अपनी आध्यात्मिक शक्ति और सांस्कृतिक एकता से संबल प्रदान किया। वे उन महान संतो में अग्रगण्य हैं जिन्होंने देश में प्रचलित अंधविश्वास, रुढ़िवादिता विभिन्न प्रकार के आडम्बरों व अमानवीय आचरणों का विरोध किया। वे आधुनिक भारत के महान चिंतक, समाज सुधारक, क्रांतिकारी, धर्मगुरु व देशभक्त थे। राष्ट्र के उत्थान व स्वाभिमान को जागृत करने हेतु स्वामी जी के महत्वपूर्ण योगदान के लिए भारतीय जनमानस सदैव उनका ऋणी रहेगा।

महर्षि दयानन्द का राष्ट्रीय स्वतंत्रता, विश्व शांति, लौकिक अम्युदय, सामाजिक न्याय और आर्थिक उन्नति के संबंध में किया गया चिंतन अविस्मरणीय है। मानव जीवन का कोई ऐसा पहलू दृग्गोचर नहीं होता जिस पर उन्होंने विचार न दिये हों। महर्षि दयानन्द ने समाज एवं राष्ट्र को वेदों के आधार पर जागृत करने का कार्य किया। दयानन्द की स्वदेश

भक्ति, स्वराज्य और स्वतंत्रता के प्रति उत्कट अभिलाषा स्पष्ट झलकती है। दयानन्द मूलतः राष्ट्रवादी थे किन्तु उन्होंने राष्ट्रवाद को संकुचित अर्थ में ग्रहण नहीं किया। उनके राष्ट्रीय विचारों का उल्लेख करते हुए योगी अरविंद ने लिखा है— He had the national Instinct and he was able to make it Luminous.

रोमां रोलां ने स्वामी जी को भारत के राष्ट्रीय पुनर्जागरण का पुरोधा बताते हुए उन्हें राष्ट्रीय चेतना का प्रतीक माना है। होमरुल आंदोलन की प्रसिद्ध नेत्री श्रीमती एनी बेसेंट ने तो यह तक लिख दिया है कि ऋषि दयानन्द ही प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने "INDIA FOR INDIANS" भारतवासियों के लिए भारत की घोषणा की थी। ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका में भी स्वामी जी ने स्पष्टतया कहा है— यथा सर्वे स्वतन्त्राः सुखिनः स्युस्तथैव सर्वे कार्यामिति अर्थात् जिस प्रकार से स्वाधीन होके सब लोग सदा सुखी रहें वैसे ही यत्न करते रहो।¹ स्वामी जी ने ऐतरेय ब्राह्मण के आधार पर राजधर्म की व्याख्या करते हुए कहा है— स्वराज्याय स्वरस्मै राज्यप्राप्तये।² वेदभाष्य में भी स्वामी जी कहा है कि— राजा वंशानुगत न होकर प्रजा द्वारा नियुक्त किया जाना चाहिए जो सर्वश्रेष्ठ एवं शुभ गुण कर्म स्वभाव से युक्त हो³ शासन के समस्त कार्य राजा द्वारा विचार—विमर्श कर किये जाने चाहिए, साथ ही ऋषि ने संपूर्ण राज्यों को संगठित रहने का भी संदेश दिया, जिससे अन्य कोई राज्य दूसरों को आक्रांत न कर सके।⁴

स्वामी जी के हृदय में एक तरफ जहां राष्ट्रीय भावना प्रबल थी तो दूसरी तरफ विदेशी शासन के प्रति असहनशीलता, तीव्र आक्रोश एवं घृणा थी। देश की पराधीनता व दरिद्रता उन्हें सदैव चिंतित करती थी।⁵ देश की फूट पर क्षोभ व्यक्त करते हुए वे कहते हैं कि— जब आपस में भाई—भाई लड़ते हैं तभी तीसरा विदेशी आकर पंच बन बैठता है।⁶ इस कथन में उस परिस्थिति की सुंदर व्यंजना है जिसमें अंग्रेजों ने भारत में अपनी सत्ता जमाई थी।

स्वदेश की उन्नति के लिए देशांतर भ्रमण की प्रेरणा देते हुए खान—पान में चौके की बात करने वालों के प्रति भी वे क्षोभ प्रकट करते हैं— इसी मूढ़ता से इन लोंगो ने चौका लगाते—लगाते, विरोध करते कराते सब स्वातन्त्र्य, आनन्द, धन, राज्य, विद्या और पुरुषार्थ पर चौका लगाकर हाथ धरे बैठे हैं।⁷

दयानन्द की स्वराज्य भावना और राष्ट्रीय चिंतन का विस्तृत ऊहापोह उनके ग्रंथों में अभिव्यक्त विचारों से स्पष्ट ही है। ऋषि ने अपनी सूक्ष्म दृष्टि से सुराज्य तथा स्वराज्य का भेद स्पष्ट करते हुए कहा है कि— कोई कितना ही करे परंतु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है अथवा मतमतान्तर के आग्रह रहित, अपने और पराये का पक्षपातशून्य, प्रजा पर माता—पिता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायी नहीं है।⁸

ईश्वर प्रार्थनाओं में भी ऋषि स्वाधीनता की कामना करते दृष्टिगोचर होते हैं— अन्य देशवासी राजा हमारे देश में कभी न हो तथा हम लोग पराधीन कभी न हों—

इषे पिन्वस्व ऊर्जे पिन्वस्व ब्रह्मणे पिन्वस्व
क्षत्राय पिन्वस्व द्यावापृथिवीभ्यां धर्मासि सुधर्म

अमेन्यस्मे नृम्णानि धारय ब्रह्म धारय क्षत्रं धारय विशं धारय।⁹

विदेशी राज्य के दुष्परिणामों से वे जनता को सावधान करते हुए कहते हैं कि— परदेशी स्वदेश में व्यवहार या राज्य करें तो बिना दारिद्र्य और दुःख के दूसरा कुछ भी नहीं हो सकता।¹⁰ ऋषि अंग्रेजी शासन तथा उससे पूर्ववर्ती शासन के कुप्रभावों का उल्लेख करते हुए कहते हैं— विदेशियों के आर्यावर्त में राज्य होने के कारण आपस की फूट, मदभेद, ब्रह्मचर्य का सेवन न करना, विद्या न पढ़ना—पढ़ाना, बाल्यावस्था में अस्वयंवर विवाह, विषयासक्ति, मिथ्याभाषणादि कुलक्षण, वेदविद्या का अप्रचारादि दुष्कर्म स्पष्टतया परिलिखित हैं।¹¹

अपनी रत्नगर्भा मातृभूमि के प्रति दयानंद के हृदय में कितना सम्मान था इसका अनुमान उनके निम्न कथन से लगाया जा सकता है— यह आर्यावर्त देश ऐसा है जिसके सदृश भूगोल में दूसरा कोई देश नहीं है, इसलिए इस भूमि का नाम सुवर्णभूमि है। आर्यावर्त देश सच्चा पारसमणि है जिसको लोहे रूप दरिद्र विदेशी छूने के साथ ही सुवर्ण अर्थात् धनाढ्य हो जाते हैं। सृष्टि के आरंभ में आर्य लोग भी इसी देश में आकर बसे तथा भूगोल में जितने भी देश हैं वे सभी इसी देश की प्रशंसा करते हैं—

एतद् देश प्रसूतस्य सकाशादग्र जन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षरेन् पृथिव्यां सर्वमानवः॥¹²

ऋषि का स्वदेश प्रेम व स्वदेश भक्ति इतनी पवित्र व सर्वव्यापी थी, कि वे अपने जीवन के अंतिम क्षण तक इस दिशा में कार्यरत रहे। स्वामी जी ने स्वदेश गौरव का अनुभव न करने वाले तथा अपने पूर्वजों व महापुरुषों का सम्मान न करने वालों को गर्हित समझा है।¹³ वे सभी विद्वानों को जाति तथा देश का उद्धार करने की प्रेरणा देते हैं— विद्वान् को यथायोग्य व्यवहार करके अज्ञानियों को दुःख सागर से तारने के लिए नौका रूप होना चाहिए।¹⁴ साथ ही ऋषि ने तत्कालीन विदेशियों के सद्गुण ग्रहण का कथन भी किया है— जो यूरोपियों में बाल्यावस्था में विवाह न करना, लड़का-लड़की को विद्या सुशिक्षा करना-कराना, स्वयंवर विवाह होना, बुरे आदमी का उपदेश नहीं होता वे विद्वान होकर किसी के पाखण्ड में नहीं फंसे, जो कुछ करते हैं वह सब परस्पर विचार और सभा से निश्चित करके करते हैं, स्वजाति के लिए तन-मन-धन व्यय करते हैं, आलस्य को छोड़कर उद्योग किया करते हैं।¹⁵ इसी प्रसंग में उनके स्वदेशी वस्तुओं के प्रति अनुराग का वर्णन करते हुए उनकी एक जातीय विशेषता का भी उल्लेख किया है— जो जिस काम पर रहता है उसको यथोचित करता है।¹⁶ इसी कथन में ऋषि की 'शत्रोरपि गुणाः वाच्याः' वाली गुणग्राहकता का बोध व श्रीमद्भगवद्गीता के इस कथन की उदात्त भावना भी झलक रही है—

स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः।

स्वकर्मनिरतः सिद्धिं यथा विन्दति तच्छृणु।¹⁷

इतना ही नहीं भारतीय राष्ट्रवाद के जागरण में ऋषि की महत्वपूर्ण देन यह भी थी कि उन्होंने सम्पर्क के लिए राष्ट्रभाषा को अपनाया। हिंदी अधिकांश भारत की भाषा होने के कारण उन्होंने गुजरात में आवाज लगाई कि देश की एकता के लिए हिंदी का पूरे देश में प्रयोग होना जरूरी है। संस्कृत के प्रखर ज्ञाता, वेदों के प्रकाण्ड पंडित होते हुए तथा जन्म से गुजराती होने पर भी उन्होंने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश को हिंदी में लिखकर भारतीय एकता को संगठित करने का प्रयास किया। वह दिन भारत के बौद्धिक इतिहास का महान दिन था, जिस दिन स्वामी जी वेदों का भाष्य हिंदी में लिखने बैठे। वेदों के जिस ज्ञान पर अब तक सिर्फ विद्वानों का एकाधिकार या उसे हिंदी भाषा में लिखकर मानव मात्र को इसके अध्ययन के अधिकार का उपदेश दिया। भारतीय जनता में आत्मविश्वास की नई भावना जागृत करने के लिए हिंदी का उपदेश व व्याख्यान प्रारंभ किया

दयानन्द-दर्शन के विविध आयाम/ 83

ताकि उनका संदेश सरलता से भारतीय जनता तक पहुँच सके।¹⁸

निःसंदेह स्वामी दयानंद प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने भारत की गिरती हुई व्यवस्था को देखकर अपनी पीड़ा व्यक्त की और भारतवासियों के स्वतंत्र की निर्भयतापूर्वक घोषणा की। भारतवासियों की सुप्त किंतु प्रचण्ड शक्ति में उनका अगाध विश्वास था। उन्होंने देश के समक्ष जिस आत्मिक राष्ट्रवाद का चित्र प्रस्तुत किया वह जन-कल्याण, उन्नति, विश्वबंधुत्व का पोषक एवं कृष्णन्तो विश्वमार्यम् का वैदिक संदेश प्रदाता तथा समस्त विश्व में धर्मयुक्त, न्यायपूर्ण और मैत्री स्थापित करने वाला है।

—: संदर्भ सूची :—

1. ऋग्वेदादि. वेदोक्त धर्म पृ. 376-377
2. वही, राजप्रजाधर्म पृ. 544-45
3. महर्षि दयानन्द सरस्वती, सत्यार्थ प्रकाश पृ. 96
4. आर्यसमाज का इतिहास प्रथम भाग, पृ. 429
5. सत्यार्थ प्रकाश समु.,-10, पृ. 351
6. वही, पृ. 353
7. वही, पृ. 351
8. सत्यार्थ प्रकाश, समु. 8 पृ. 297
9. आर्याभिविनय द्वितीय प्रकाश, मन्त्र-31
10. सत्यार्थ प्रकाश, समु. 10 पृ. 350
11. वही, पृ. 353
12. मनुस्मृति 2-20
13. सत्यार्थ प्रकाश समु. 11, पृ. 514
14. वही, पृ. 517
15. वही, पृ. 516
16. वही, पृ. 516
17. गीता -18.45
18. आधुनिक भारतीय सामाजिक एवं राजनैतिक सिद्धान्त, पृ. 71

